International Research Journal of Human Resources and Social Sciences
ISSN(O): (2349-4085) ISSN(P): (2394-4218)
Impact Factor- 5.414, Volume 6, Issue 01, January 2019
Website- www.aarf.asia, Email : editor@aarf.asia , editoraarf@gmail.com

' फाँस ' उपन्यास की आदिवासी ज़िन्दगी

डॉ सजीव के, असिस्टेंट प्रोफेसर,
एन एन एस कॉलेज, ओटप्पलम .

फाँस उपन्यास पूरे भारत के किसानों की विडंबना एवं दर्दों का दस्तावेज है । 'फांस' में आदिवासी 'कोबरा' जाति की समस्याओं का बयान है। उनकी कई समस्याएँ होती हैं, इनका समाधान अपने परे की बात हैं, लेकिन वे अपने बीच के अंधविश्वासों, छुआछूतों से बचना भी नहीं चाहते हैं। उनकी ज़िन्दगी को उजाले में लाना इस शोध का ख़ास उद्देशय है। (कुंजी शब्द : आदिवासी, वनवासी, कोबरा, गरीबी आदि।)

समकालीन दलित लेखकों की परंपरा में संजीव का नाम आदर के साथ लिया जाता है । उन्होंने उपन्यासकार, कहानीकार और कवि के नाम से अपना नाम हिंदी साहित्य की दुनिया में रोशन कर दिया है । आदिवासी की समस्याओँ को ध्यान में रखकर लिखा गया उनके उपन्यास ' फाँस ' बहुतचर्चित एवं लोकप्रिय है । आदिवासीयों के बारे में हमारे बीच की ऐतिहासिक मान्यता यह है कि आर्यों के आने के पहले से भी भारत के मैदानों , पहाड़ों , जंगलों, वनांचलों में अनेक जातियाँ रहती थीं । मैदानी हिस्सों में बसनेवाले आदिवासियों को आर्यों से संघर्ष करना पड़ा । उनमें कुछ हार गई और कुछ ने हार नहीं मानीं । हार मानने वाली जातियाँ आगे चलकर दास कहलाईं गयीं । पहाड़ों, जंगलों और वनांचलों में रहने वाली जातियों का आर्यों से यदा - कदा ही संघर्ष हुआ । वे सामान्यत : मैदानी सभ्य समाज में अलग - अलग पड़ी रहीं यही आदिवासी वनवासी कहलायीं। प्रो. गिलानी के मतानुसार " एक विशिष्ट भू - प्रदेश में रहनेवाला , समान बोली बोलनेवाला , अक्षरों की पहचान न होनेवाला , समूह , गुट आदिवासी समाज कहलाता है । " (1) आदिवासी ही यहां की मूल निवासी है। इस पर बल देते हुए डॉ. गोविंद गारे के

© Associated Asia Research Foundation (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

मतानुसार " आदिवासी ही इस देश के मूल निवासी हैं । बाहर से आए हुए आर्यों ने भारत के सभी प्रांतों का वर्चस्व प्रस्थापित कर साम्राज्य फैलाया । इसलिए आदिवासियों को जंगलों व पहाड़ों में आश्रय लेना पड़ा । परिणामस्वरूप आदिवासी हमेशा के लिए नगर संस्कृति से दूर रहे । साथ ही अन्य लोगों ने भी उनकी उपेक्षा की । " (2) भारतीय संस्कृति कोश के अनुसार " आर्य एवं द्राविड़ भारत के इन दो मानव - समाज को छोड़कर उनसे भी पूर्व भारत में रहनेवाले अथवा दूसरे देश से आकर वन पर्वत के आश्रय में रहनेवाले जातीय समूह को वन्य जाति अथवा आदिवासी कहा जाता है । " (3) आदिवासी समाज अस्थिर एवं असंगठित है । क्योंकि औद्योगीकरण व कारोबार, बाँध परियोजनाएँ, शाहराहों की तामीर , रेलमार्गों का निर्माण आदि के नाम पर उनको हमेशा के लिए भूमिहीन, बेघर बनाके बर्खाश्त किया गया है । उनका अस्तित्व आज खतरे में है और मज़दूर बनकर अपनी आजीविका के लिए इधर से उधर उधर से इधर घूमते भटकते ही रहते हैं । इसी कारण वे तालीम से दूर रहते नजर आते हैं, और उनकी निरक्षरता एवं अज्ञानता ही उनके विकास मार्ग में सबसे बड़ा अवरोधक है । वह किसीं के सामने आवाज नहीं उठा सकते हैं ।

आदिवासी साहित्य की परिभाषा के बारे में प्रो.के. सच्चिदानंद के मतानुसार " आदिवासी साहित्य भूमि से प्रसूत आदिम वेदनाओं एवं अनुभूतियों का शब्द रूप है । प्रस्तुत साहित्य में वेदना है, विद्रोह है और स्वयं की वैसी अभिव्यक्ति है । आदिवासी साहित्य जनवादी है, जो वनवासी है । मुक्ति की कामना करनेवाला संकल्प साहित्य है । "(4)

संजीव ने अपने आस पास से जो कुछ देखा और अनुभव किया उसी का हक़ीक़ती बयान अपने साहित्य में भी किया । उनके साहित्य में असहाय, शोषित और पीड़ित व्यक्ति के प्रति हमेशा सहानुभूति रही है और उच्चवर्ग के प्रति विरोध, घृणा दिखाई देती है । उनका साहित्य हमेशा ही उच्चवर्ग एवं शोषक वर्ग के खिलाफ आवाज उठाने की प्रेरणा देता है । कथाकार संजीव हिंदी साहित्य के सशक्त और प्रभावशाली साहित्यकार हैं । उनकी रचनाओं का विषय यथार्थ एवं अनुभवों से परिपूर्ण है । संजीव ने निम्नवर्ग को माध्यम बनाकर उनका त्रासद जीवन अपनी रचनाओं में उभारा है ।

उन्होंने अपने साथ हो रहे अन्याय एवं अत्याचार पर अपनी लेखनी चलाकर साहित्य का निर्माण किया है ।

संजीव के 'सावधान नीचे आग है' और 'धार' में मध्यप्रदेश की झरिया इलाके की कोयला खान की एक दुर्घटना को केंद्र में रखकर कोयला माफियाओं, ठेकेदारों, दलालों, शोषक के बेरहम रूप का बयान किया गया है । 'पाँव तले की दूब' और 'जंगल जहां शुरू होता है' उपन्यासों का विषय झारखंड और बिहार के दूरदराज अंचलों की वास्तविकता से जुड़ा हुआ होता है ।

भारतीय वनन सर्वेक्षण के मुताबिक जंगल के 60% जमीन पर आदिवासी बसे हुए हैं । भारत के कुल 187 आदिवासी जिले हैं । इन इलाकों में आदिवासी कई पीढ़ियों से रह रहे हैं । संजीव लिखित 'फाँस' उपन्यास 2015 में प्रकाशित हुआ । इस उपन्यास में 'कोबला' जनजाति का बयान किया गया है। बनगांव के आस पास अनेक छोटे-छोटे गांव हैं । इन सभी गाँवों में 'कोबला ' आदिवासी बस रहे हैं । यही जाति जंगलों में ही रहती है आदिवासी लोग प्राचीन समय से ही जंगलों में रहती है । जंगल उनका प्राणतत्व माना जाता है । जंगल के बिना उनका जीवन आधा अधूरा है । जंगलों में से लकड़ियां काटकर या तो औषधियांँ बेचते थे और उनमें से जो पैसा मिलता था वह भोजन के लिए खर्च करते थे । बनगांँव का जंगल भी दूर-दूर तक फैला हुआ है । यहां जंगल अपने विविध रूपों और अर्थ छवियों के साथ प्रस्तुत हुआ है । यह जंगल कोबला जनजाति , पुलिस और प्रशासन, डाकू, राजनीति, धर्म , समाज आदि को अपने में समेट लेता है । आज़ादी के बाद जनता को लगा कि मूलभूत सुविधाओं के लिए तरसना पड़ेगा नहीं । रोटी , कपड़ा और मकान की कोई समस्या ही नहीं रहेगी । किंतु स्वतंत्रता के बाद भी इन सब समस्याओं का समाधान नहीं हुआ है । बीमारी, गरीबी , भूखमरी आदि समस्याएं कोबलाओं को विरासत में मिली है । कोबला लोग इन सभी समस्याओं से जूझते रहते हैं, इनका सामना करते हैं, किंतु सफलता मिलती नहीं है । वह अपना जीवन आर्थिक अभावों में ही व्यतीत करते नजर आते हैं । उनके अभावग्रस्त जीवन का प्रभावशाली चित्रण 'फाँस' उपन्यास में किया गया है ।

'कोबला' आदिवासी जंगलों में भटकती एक जाति है । वह एक जगह स्थायी तौर पर नहीं रहते, उसके पीछे भी अनेक कारण हैं कि सत्ताधारी लोग उनको एक जगह

स्थापित नहीं होने देते हैं । वह जिस जगह पर कुछ समय के लिए रहते हैं वहां जाकर लोग अनेक समस्याएँ खड़ी करते हैं । सत्ताधारी लोग बताते हैं कि आपके इलाकों में नई नई योजनाएं आ रही हैं, कुछ ही समय में उनका निर्माण होगा । किंतु इनका निर्माण करने के लिए यह जगह आपको छोड़नी पड़ेगी । आदिवासियों को जगह छोड़ने के लिए मजबूर कर देते हैं । उनको एक जंगल से दूसरे जंगलों में भगाया जाता है । शासकों के इस शोषण का बयान उपन्यासकारर ने खूब बेहतरीन ढंग से इस उपन्यास में किया है। शिबू और शकुन के दर्दभरी कहानी के माध्यम से शोषण की तस्वीर खींची गयी है।

शिबू का परिवार खेतों का काम करके ही अपना जीवन बिताता है। बनगांव के सब लोगों के लिए खेती ही सहारा है । बनगांव में अनेक जातियां पनप रही हैं । इसी वहज गांव आधा आधा बांटा हुआ है । इनमें मराठों, महारों, चमारों, कुनबियों, मांग, मछुआरों और आदिवासियों की मिश्रित आबादी है । इसलिए इस गांव में लोग ऊँच नीच और छुआ-छूत मानते हैं । आदिवासियों में दिखाई देनेवाली छुआछूत की समस्या उन्हें एकदम अपने विकास से पीछे हटाती है।

आदिवासी समाज में शिक्षा का अभाव होता है , वह जंगली इलाकों में रहते हैं । उसी कारण शिक्षा से वंचित होते हैं । लड़कियों को ज्यादा पढ़ाते नहीं हैं, क्योंकि उनको घर के कामों में व्यस्त रखते हैं । समाज में लड़कियों को ज्यादा स्वतंत्रता नहीं दी जाती है । वह घर के कामों के साथ खेतों के काम भी करती रहती है । शिक्षा के अभाव के कारण उनका जीवन भी बरबाद हो जाता है ।

संजीव ने शिबू की बेटी कलावती के माध्यम से कहना चाहते हैं कि अपने बीच के लोग ही उनकी तरक्की केलिए बाधा डालते हैं। कलावती पढ़ने में होनहार थी । वह पढ़ लिखकर कुछ बनना चाहती थी। किंतु बनगांव के लोगों को यह अच्छा नहीं लगता था । समाज वाले शिबू से कहते हैं कि लड़कियों को पढ़ाने से बिगड़ जाती है । वे शिक्षा में बाधा डालना चाहते हैं, फिर भी कलावती किसी का मानती नहीं है । यहां उपन्यासकार ने कलावती के द्वारा अपना उद्देश्य व्यक्त कर देता है।

आदिवासी लोगों के बीच में दहेज़ प्रथा चलती है। इसकी तीखी मिसाल भी उपन्यासकार हमें देते हैं। इधर शिबू और शकुन की दोनों बेटियां बड़ी होती जा रही हैं। शिबू की आर्थिक स्थिति दिन प्रतिदिन बिगड़ती जाती है । वह बहुत मुश्किल से अपना परिवार चलाता है । समाज वाले उनकी बेटियों का ब्याह कराने के लिए कहते हैं । किंतु शादी की बात आती है तो शिबू दुविधा में पड़ जाता है । क्योंकि उनको दहेज की चिंता होने लगती है । दहेज के बिना शादी करना संभव ही नहीं है। शिबू के पास इतना पैसा भी नहीं है कि अच्छी तरह से बेटियों की शादी कर सके । खेतों में से तो कुछ मिलता भी नहीं है और जो मिलता है वह खाने में ही खर्च हो जाता था । शकुन भी बताती है कि अगर लड़कियों को पार लगाना है तो कर्ज लेना ही पड़ेगा, कर्ज के बिना कुछ भी होनेवाला नहीं है और यह कर्ज की समस्या पूरे उपन्यास में व्याप्त है । दहेज़ ज़हर की तरह आदिवासियों के बीच में फ़ैल रहा है। अपने पास की ज़मीन को दहेज़ में देने पर कैसे वे ज़िन्दगी गुज़रेंगे ? इस जलती समस्या पर भी लेखक ने इशारा दिया हैं।

शकुन सभी सरकारी लोगों को कोसने लगती है । वन विभाग के अधिकारी भी आदिवासी लोगों का शोषण करते हैं । किसी को भी जंगल के भीतर आने नहीं देते हैं । जंगलों के पेड़ों लगे फल फूल सूख जाते हैं, फिर भी गरीब लोग उनका उपयोग नहीं कर सकते हैं । वन अधिकारी भी अपने स्वार्थ के खातिर जंगलों की चीजों को छूने भी नहीं देते हैं । उनको जो भी व्यक्ति घूस देता है, उनको ही जंगलों में जाने की इजाजत देते हैं । फिर वह बाँस, महुए, तेंदू आदि काटकर ले जा सकते हैं । वनवासी को वन में प्रवेश न देनेवाले बेरहम अफसर उनकी ज़िन्दगी की परवाह नहीं करते हैं। संजीव जी यह दिखाना चाहते हैं कि सरकारी अफसर को थोड़ी भी मेहरबानी इन्हें लोगों के प्रति दिखानी चाहिए।

'कोबला' आदिवासी पूरा दिन काम करते रहते हैं । इसलिए ज्यादा थक जाते हैं । थकान को दूर करने के लिए वे लोग शराब का सहारा लेते हैं । केवल पुरुष ही नहीं बल्कि स्त्रियां भी शराब का सहारा लेती हैं । शराब पीना उनके समाज में आम बात हो गई है । जिसके पास जमीनें नहीं होती हैं वह शराब बेचने का धंधा करते हैं और अपना परिवार चलाते हैं । वह लोग शिक्षा से वंचित होते हैं , उसी कारण अच्छी नौकरीयाँ भी मिलती नहीं हैं । इसलिए एक दूसरों को देखकर शराब

का धंधा ही करते रहते हैं । वह जंगलों में से महुए चुन चुनकर लाते हैं और शराब बनाते हैं । बच्चों के कपड़े, शिक्षा, भोजन, खेत आदि का खर्च शराब बेचकर निकाल लेते हैं ।

'कोबला' आदिवासी अब स्वतंत्र होने की मांग कर रहे हैं । सत्ताधारी लोग, उद्योगपति, जमींदार आदि उनका येन केन प्रकारेण आज तक शोषण करते आये हैं, उनको खत्म करने के लिए तैयार हो गए हैं । आज तक वह दूसरों के इशारों पर चल रहे थे । किंतु अब उन्होंने खुद निर्णय लेना सीख लिया है । 'कोबला' जाति के लोगों ने अन्याय के खिलाफ आवाज उठाकर सफलता हासिल कर ली है । वह किसी भी संकटों से अब डरनेवाले नहीं हैं ।

आदिवासियों के सामने सबसे बड़ी जो समस्या है, वह है विस्थापन । आदिवासी जंगलों में रहते हैं, वहां अपना घर बनाते हैं, फिर भी वह जगह उनकी नहीं मानी जाती है । सत्ताधारी लोग वह जमीनें हड़पने के लिए षड्यंत्र रचते हैं । किसी न किसी तरह आदिवासियों को भगाकर वह जमीन छीन लेते हैं और ज्यादा दाम लेकर बेच देते हैं । ऐसा होने से आदिवासियों की स्थिति दयनीय हो जाती है । बाद में वह काम के लिए भटकते रहते हैं ।

सरकार भी आज इनके इलाकों में नई नई योजनाएं लेकर आती है । आदिवासियों की जमीनों में इमारतें, नहर, सड़क, कारखाने, कोलनियँ आदि बनवाते हैं । लेकिन एक पैसा भी उनको नहीं दिया जाता है । नेता, सरकारी अफसर, पटवारी आदि मिलकर उनकी जमीनों को दूसरों के नाम कर देते हैं और अपना लाभ ढूंढते हैं । आदिवासी के पास कुछ बचता नहीं है तो वह रोजी रोटी के लिए शहरों में चले जाते हैं । उनके घर तहस नहस करके योजनाओं का निर्माण किया जाता है । शहरों में जाकर भी वह काम के लिए इधर उधर भटकते रहते हैं और अपना जीवन बिताते हैं । विस्थापन के कारण आज आदिवासी जीवन बरबाद होने लगा है । वे आज यहां तो कल वहां घूमते रहते हैं, इसलिए उनके जीवन में परिवर्तन नहीं आता है और उनके बच्चों का जीवन भी अंधकारमय बन जाता है ।

'फाँस' उपन्यास में भी 'कोबला' जाति के लोगों को देवगीरी एवं सदानंद मिलकर छलते हैं । वह आदिवासियों को अपनी जमीन एवं घर छोड़ने के लिए

मजबूर कर देते हैं । सत्ताधारी लोग भी उनका शोषण करते रहते हैं और उनकी जमीनें छीन लेते हैं ।उपन्यास में 'कोबला' आदिवासी राजनैतिक समस्या का सामना करते नजर आते हैं । नेता लोग भी आदिवासियों के साथ अन्याय करते हैं । वह भी उनकी बातों को सुनने से इनकार कर देते हैं । जब नेता उनके इलाकों में जाते हैं तो बड़ी बड़ी बातें करते हैं । उनके उद्धार के लिए नई नई योजनाएं जाहिर करते हैं । किंतु एक भी लाभ आदिवासी को मिलता नहीं है । नेता लोग भी वादे करके मुकर जाते हैं ।

अतिवृष्टि , अनावृष्टि एवं अकाल के कारण आदिवासियों की फसलों को ज्यादा नुकसान होता है । आदिवासी निराश हो जाते हैं । वह सरकार के सामने रोते - बिलखते हैं मुआवजे के लिए दफ्तर में ठोकरें खाते रहते हैं । नेताओं से बिनती करते हैं, किंतु उनको तो आदिवासियों की बातें फिजूल लगती हैं । नेता और सरकारी अफसर मिलीभगत होते हैं उसी कारण एक भी पैसा आदिवासियों को मिलता नहीं है ।

आज भी आदिवासियों का ज्यादा शोषण हो रहा है । किसी न किसी तरह से उनका शोषण किया जाता है । आदिवासी इमारतें, सड़क, नदी, कारखाने आदि बनाने में अपना योगदान देते हैं । कड़ी धूप में भी काम करते रहते हैं । अपने शरीर की भी परवाह नहीं करते हैं । लेकिन काम करने के बाद जब उनको पैसा देने की बात आती है तो कम दाम देकर उनके साथ अन्याय किया जाता है । इतना काम करने के बावजूद भी उनके जीवन में परिवर्तन नहीं आता है, क्योंकि वह शोषण के शिकार बने हुए हैं ।

आदिवासी अनपढ़ होते हैं और जब वह सरकारी दफ्तरों में जाते हैं तो वहाँ भी उनका शोषण होता है । किसी काम हेतु दफ्तरों में वह भटकते रहते हैं, फिर भी सही मार्गदर्शन देने वाला कोई नहीं होता है । जब किसी कागजों पर हस्ताक्षर करवाना हो तो बाबू लोग पैसे मांगते हैं बाद में सही काम करते हैं । आदिवासी जो भी काम करते हैं उनमें उनका शोषण अवश्य होता ही है । आदिवासी महिलाओं का ज्यादा शोषण होता है । वह भी पुरुषों के साथ साथ सभी काम करती रहती है। खेतों के काम, कारखाने में, रास्ता बनाना आदि काम करने में अपना योगदान देती हैं । पैसेदार लोग सही मौका पाकर उनका शोषण करना शुरू कर देते हैं । इतना ही

नहीं समाज में उनकी बदनामी भी होती है । कभी-कभी तो उनको मौत के घाट भी उतार देते हैं ।

आदिवासियों का जीवन अभावों में ही बीतता है । उनके पास जीवन जीने के लिए ज्यादा सुख सुविधाएं नहीं होती हैं । वह तो केवल काम करके ही अपना परिवार चलाते हैं । उनके पास पहनने के लिए पूरे कपड़े भी नहीं होते हैं। केवल दो तीन कपड़ों से काम चलाते हैं । वह सभी त्यौहार सादगी से मानते हैं । उनके पास अधिक पैसे नहीं होते हैं , इसलिए त्यौहारों में ज्यादा खर्च नहीं करते हैं । गरीबी के कारण वह अपने बच्चों को पढ़ाते भी नहीं हैं, उसी कारण बच्चों का भविष्य बिगड़ जाता है ।

'फाँस' आदिवासी संघर्षों का उपन्यास है। इसमें 'कोबला' आदिवासियों के संघर्ष का चित्रण मिलता है । वह शुरू से लेकर अंत तक अन्याय के खिलाफ लड़ते हैं और न्याय पाते हैं । वे अन्याय एवं अत्याचार को खत्म करना चाहते हैं । उनके साथ जिसने भी गलत व्यवहार किया है , उनका हिसाब माँगते हैं । आज हमें उनके जीवन में थोड़ा बदलाव देखने को मिलता है। संघर्ष के बिना सफलता मिलना मुमकिन नहीं है । 'कोबला' जाति अज्ञानता की खाईं से उठकर अपने अधिकारों की मांँग कर रही है । उनके पथ पर अनेक रुकावटें खड़ी होती हैं, किंतु उन्होंने डटकर सामना किया है ।

'कोबला' जाति के लोगों में एक दो व्यक्ति ही केवल पढ़े - लिखे मिल जाते हैं , वह बिजली के लिए बिजली विभाग के अधिकारियों को शिकायत भी करते रहते हैं । किंतु उनका सुनने वाला कोई नहीं होता है । सरकारी अफसर, नेता, पटवारी आदि इनके इलाकों की जांँच पड़ताल करने के लिए जाते हैं और बिजली दिलाने के वादे करके चले आते हैं । फिर भी बिजली की व्यवस्था करवाते नहीं हैं । उनको भी इस जाति की परवाह नहीं है । उनका पूरा जीवन अंधेरों में ही कट जाता है । बिजली के लिए आखिरी दम तक संघर्ष करते रहते हैं , किंतु सफलता मिलती नहीं है । सत्ताधारी लोग भी चलते हैं कि 'कोबला' जाति के आदिवासी अंधेरे में ही रहें । " लिखा है कि अधोहस्ताक्षरित बाँसोड़ा ग्राम के हम आदिवासी और दलित बहुत लोग आपसे निवेदन करते हैं कि आजादी के 65 साल बाद भी हमारा ग्राम विद्युतीकरण की सुविधा से वंचित है । हमारे और आपके बीच अब तक के पत्राचारों की प्रति संलग्न है

। यदि सात दिनों के अंदर विद्युत की व्यवस्था हमारे गाँव को न हुई तो हम कोई भी कदम उठाने को बाध्य होंगे । " (5)

कर्ज की चित्रण भी इस उपन्यास में किया गया है । किसान कर्ज लेकर खेती करते हैं और उनके परिवार भी चलाते हैं । कर्ज बढ़ जाने की वजह से ये लोगों ने आत्महत्या कर लेते हैं । उपन्यास में कर्ज की समस्या भी है । कर्ज के कारण ही किसान परिवार बरबाद होता है । 'फाँस' उपन्यास में पात्र, संवाद, उद्देश्य, देशकाल एवं वातावरण आदि का चित्रण भी श्रेष्ठ है । उपन्यास के आरंभ से लेकर अंत तक कथानक भी क्रमबद्ध और पाठक के हृदय को उत्साह देनेवाला है । लेखक ने इस उपन्यास का वर्णन अपने अनुभवों के आधार पर किया था इसलिए इस उपन्यास एक अलग स्थान ग्रहण कर दिया था । इस उपन्यास में संजीव ने पूरे भारत के आदिवासी किसान एवं दलित किसानों की जो स्थिति है उसका यथार्थ चित्रण किया है । उपन्यास में विदर्भ क्षेत्र तो एक संकेत है पर पूरे भारत के किसानों की विडंबना, दर्शनीयता का दस्तावेज़ है फाँस उपन्यास ।

संदर्भ संकेत

1. स डॉ. शिवाजी देवरे, डॉ. मधु कराटे : समकालीन हिंदी उपन्यासों में आदिवासी विमर्श, पृष्ठ 13

2. वही : पृष्ठ. 13

3. वही : पृष्ठ. 34

4 . सं.डा.खन्नाप्रसाद अमीन : आदिवासी साहित्य, पृष्ठ. 58

5 . संजीव : फाँस उपन्यास , पृष्ठ 134